ज्योतिषशास्त्र का इतिहास और ज्योतिष प्रवर्तक आचार्यों का परिचय एवं उनकी कृतियाँ

ज्योतिषशास्त्र की परिभाषा और उसका विकास

ज्योतिषशास्त्र का विकास मानव जीवन के विकास के साथ ही हुआ। मनुष्य स्वभावतः जिज्ञासु होता है। इस जिज्ञासा के फलस्वरूप वह प्रत्येक बात की गहराई में जाना चाहता है वह जानना चाहता है कि कब? क्यों ? और कैसे ? जगत् का समस्त विकास इसी जिज्ञासा का परिणाम है। मानव ने जब कभी आकाश की ओर दृष्टि डाली होगी तब उसके मस्तिष्क में यह उत्कण्ठा उत्पन्न हुई होगी कि ये तारे ग्रह-नक्षत्र क्या वस्तु हैं? तारे टूटकर क्यों गिरते हैं ? सूर्य प्रतिदिन पूर्व से ही क्यों उदित होता है तथा ऋतुओं का आगमन क्रमानुसार ही क्यों होता है ?

आकाशीय घटनाएँ मानव को आकर्षित करती रही हैं । ज्योतिषशास्त्र की उत्पत्ति इसी आकर्षण का परिणाम है। ज्योतिषशास्त्र की व्युत्पत्ति **''ज्योतिषां सूर्यादिग्रहाणां बोधकं शास्त्रम्''** से की गई है अर्थात् सूर्यादि ग्रह और काल का बोध कराने वाला शास्त्र ज्योतिषशास्त्र कहलाता है । इसके अन्तर्गत ग्रह, नक्षत्र, ग्रहाचार, उदय-अस्त, धूमकेतु ग्रहों का परिभ्रमण, ग्रहण, ग्रहों की स्थिति और उनका मानवजीवन पर प्रभाव आदि विषयों का अध्ययन किया जाता है ।

कतिपय मनीषियों के अनुसार नभोमण्डल में स्थित ज्योति सम्बन्धित विद्या को ज्योतिर्विद्या कहते हैं तथा जिस शास्त्र में इस विद्या का साङ्गोपाङ्ग निरुपण किया जाता है वह ज्योतिषशास्त्र है। ज्योतिषशास्त्र का एक अन्य नाम ज्योतिःशास्त्र भी है जिसका अर्थ प्रकाशदायक अथवा प्रकाश से सम्बन्धित शास्त्र होता है । अर्थात् जिस शास्त्र से संसार का मर्म, जीवन-मरण का रहस्य और जीवन के सुख-दुःख के सम्बन्ध में पूर्णप्रकाश प्राप्त होता है वह ज्योतिषशास्त्र है। संक्षेप में ज्योतिर्मय जाग्रत् जगत् की एक दिव्य ज्योति का नाम ही जीवन है और ज्योति का पर्याय ज्योतिष है।

परिभाषा -

ग्रह नक्षत्रादि खगोलीय ज्योतिष्पिण्डों का प्रतिपादन जिसमें हो वह 'ज्योतिष' कहलाता है अथवा जिस शास्त्र में ग्रह-नक्षत्र विज्ञान तथा संसार के शुभाशुभ का ज्ञान हो उसे ज्योतिष कहते हैं ।

नक्षत्रों का प्रतिपादन किया जाता है जिसमें इस अर्थ में **अर्शादिभ्योऽच्** इत्यादि सूत्र से निष्पन्न ज्योतिष शब्द ज्योति का प्रतिपादक है ।

द्योतित अर्थात् प्रकाशित होते है । ग्रह नक्षत्रादि जिससे इस व्युत्पत्ति के अनुसार **द्युतेरिषण्णादेश्च जः** इत्यादि उणादि सूत्र से निष्पन्न ज्योतिष शब्द है ।

ज्योति अर्थात् सूर्यादि ग्रहों की गति आदि का प्रतिपादक होने से ज्योतिषशास्त्र है, किन्तु उक्त परिभाषा वेदाङ्गशास्त्र विशेष को ही परिभाषित करती है।

ज्योतिष अर्थात् ग्रह-नक्षत्रों की गति को अधिकृत करके निर्मित शास्त्र को ज्योतिष कहते हैं ।

परिभाषा का शाब्दिक अर्थ है - कोई सामान्य नियम, विधि या परिभाषा जो सर्वत्र घट सके, किन्तु ज्योतिषशास्त्र को इस परिभाषा में आबद्ध करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि इस शास्त्र की परिभाषा भारतवर्ष में समय-समय पर विभिन्न रूपों में मानी जाती रही है। सुदूर प्राचीनकाल में केवल ज्योति पदार्थ ग्रह नक्षत्र तारों आदि के स्वरूप विज्ञान को ही ज्योतिष कहा जाता था। उस समय सैद्धान्तिक गणित का बोध इस शास्त्र से नहीं होता था क्योंकि उस काल में केवल दृष्टि पर्यवेक्षण द्वारा नक्षत्रों का ज्ञान प्राप्त करना ही अभिप्रेत था। प्राचीनकाल में मनुष्य की दृष्टि सूर्य चन्द्र पर पड़ी तो उनको देवत्त्व रूप में मान लिया। वेदों में कई स्थानों पर नक्षत्र सूर्य चन्द्र के स्तुतिपरक मन्त्र प्राप्त होते हैं। पराशर ने भी ग्रहों में देवत्त्व माना है । यथा -

अवताराण्यनेकानि ह्यजस्य परमात्मनः।
जीवानां कर्मफलदो ग्रहरूपी जनार्दनः।।

अर्थात् अजन्मा परमात्मा के अनेक अवतार हैं। जीवों के कर्मानुसार फल देने के लिये ग्रह ही जनार्दन भगवान् के रूप हैं ।

ब्राह्मण और आरण्यक के समय यह परिभाषा और विकसित हुई तथा उस काल में नक्षत्रों की आकृति स्वरूप गुण एवं प्रभाव का ज्ञान प्राप्त करना ज्योतिष माना जाने लगा। आदिकाल (ई.पू. ५०० से ५०० ईस्वी तक का समय) में नक्षत्र के शुभाशुभ फलानुसार कार्यों की विवेचना तथा ऋतु अयन दिनमान लग्न आदि के शुभाशुभानुसार विधायक कार्यों को करने का ज्ञान प्राप्त करना भी इस शास्त्र की परिभाषा में सम्मिलित हो गया । सूर्यप्रज्ञप्ति, ज्योतिषकरण्डक, वेदाङ्ग ज्योतिष आदि ग्रन्थों के प्रणयन तक ज्योतिष के गणित और फलित में दो भेद स्पष्ट नहीं हुए थे । यह परिभाषा यहीं तक सीमित नहीं रही, अपितु ज्ञानोन्नति के साथ इसका विस्तार होता गया तथा इसके अन्तर्गत ग्रहों के स्वरूप, रङ्ग, दिशा, तत्त्व, धातु का विवेचन भी आने लगा ।

मनुष्य जब किसी विषय के सम्पर्क में आता है तो उस विषय की उत्त्पत्ति को जानने का प्रयास करता है । इस खोज के पीछे उसकी जिज्ञासा इस बात में होती है कि सम्बन्धित विषय कितना विश्वसनीय है और उसने विकास के कितने सोपान पार किये हैं। विकास की यह यात्रा ही विषय को विश्वसनीयता प्रदान करती है ।

भारतीय ऋषियों ने योगाभ्यास द्वारा अपनी सूक्ष्म प्रज्ञा से शरीर के भीतर ही सौरमण्डल के दर्शन किये। ''**यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे**'' सिद्धान्त भारतीय दर्शन में प्राचीन काल से ही प्रचलित है और इसी के

अनुसार स्वनिरीक्षण कर आकाशीय सौर–मण्डल की व्यवस्था ऋषियों ने की हैं।

पराशरादि आचार्यों के सिद्धान्तों पर मनन करने पर ज्ञात होता है कि यह शरीर ही सम्पूर्ण ग्रह कक्षावृत्त है । यथा –

मेषो वृषश्च मिथुनः कर्क-सिंह-कुमारिकाः ।

तुलालिधनुषो नक्रे कुम्भमीनास्ततः परम् ।।

मेष,वृष,मिथुन,कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन ये बारह राशियाँ हैं।

शीर्षाननौ तथा बाहू हृत्क्रोडकटिवस्तयः ।

गुह्योरुजानुयुग्मे वै युगले जङ्घके तथा ।।

जन्म लग्न से उक्त बारह राशियाँ क्रम से काल पुरुष के शिर, मुख दोनों भुजाएँ, हृदय, पेट, कटि,वस्ति, गुह्यस्थान, ऊरु, दोनों जानु, जंघाओं में स्थित है ।

कालस्यात्मा भास्करश्चित्तमिन्दुः सत्त्वं भौमः स्याद्वचश्चन्द्रसूनुः ।

देवाचार्यः सौख्यविज्ञानसारः कामः शुक्रो दुःखमेवार्कसूनुः ।।

कालरूपी पुरुष का अङ्ग विभाग इस प्रकार है – सूर्य आत्मा, चन्द्रमा चित्त मङ्गल पराक्रम, बुध वचन, बृहस्पति सुख तथा विज्ञान का सार, शुक्र काम और शनि दुःख है ।

इस प्रकार आकाश स्थित ग्रह–राशि, शरीर–स्थित राशि ग्रहों के प्रतीक हैं । तात्पर्य यही है कि प्राचीन आचार्यों ने सात ग्रह बारह राशि की स्थिति देहधारी प्राणियों के भीतर ही बताई है । इस शरीर स्थित सौरचक्र का भ्रमण आकाश स्थित सौर–मण्डल के नियमों के आधार पर ही होता है । ज्योतिषशास्त्र व्यक्त सौर–जगत् के ग्रहों की गति, स्थिति आदि के अनुसार शरीर स्थित अव्यक्त सौर जगत् के ग्रहों की गति स्थिति आदि को प्रकट करता है । इसलिये इस शास्त्र द्वारा निरूपित फलों का मानव जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है ।

यद्यपि भारतीय परम्परा में ''**अपौरुषेय वेदाः**'' सिद्धान्त प्रचलित है । ऋग्वेद हमारा प्राचीन ग्रन्थ है। आधुनिक पाश्चात्य विद्वान् बेवर सर विलियम जोन्स, व्हिटनी, काल बुक, डेविस मैक्समूलर, थीबो और भारतीय विद्वानों में कृष्ण शास्त्री बालकृष्ण दीक्षित, सुधारक द्विवेदी, डॉ.आर.श्याम शास्त्री आदि विद्वानों ने ऋग्वेद का काल ईसा पूर्व चार हजार वर्ष स्वीकृत किया है। वेदों में खगोल, भूगोल, कृषिकर्म, राजधर्म आदि विभिन्न विषयों का प्रतिपादन है। आधुनिक घटिका यन्त्र (घड़ी) के निर्माण से पूर्व प्राचीनकाल में ऋषि मुनि आकाशीय ग्रहों, उपग्रहों, नक्षत्रों के आधार पर काल ज्ञान करते थे। भारतीय ज्योतिष की प्राचीनता पर प्रो. मेक्समूलर ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि ''भारतीय, आकाश मण्डल और नक्षत्र मण्डल आदि के बारे में अन्य देशो के ऋणी नहीं हैं । वे ही इन वस्तुओं के मूल आविष्कारकर्ता हैं।''

फ्रांसीसी पर्यटक फ्राक्वीस वर्नियर ने भी भारतीय ज्योतिष ज्ञान की प्रशंसा करते हुए लिखते हैं कि ''भारतीय अपनी गणना द्वारा चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण की बिलकुल ठीक भविष्यवाणी करते हैं इनका ज्योतिष ज्ञान प्राचीन और मौलिक है।''

काण्ट आर्मस्टर्जन ने लिखा है कि ''वेली द्वारा किये गये गणित से यह प्रतीत होता है कि ईसवी सन् से तीन हजार वर्ष पूर्व में ही भारतीयों ने ज्योतिषशास्त्र और भूमितिशास्त्र में अच्छी पारदर्शिता प्राप्त कर ली थी ।''

डॉ. राबर्टसन का कथन है कि ''बारह राशियों का ज्ञान सबसे पहले भारतवासियों को ही हुआ था । भारतीयों ने प्राचीनकाल में ज्योतिर्विद्या में अच्छी उन्नति की थी ।''

उक्त कथनों से स्पष्ट हो जाता है कि ज्योतिर्विज्ञान की उत्पत्ति भारत में ही हुई और इसकी जड़े वेदों में भी विद्यमान है ।

ज्योतिषशास्त्र के विकास का काल वर्गीकरण अन्य किसी प्राचीनशास्त्र या किसी ज्योतिष शास्त्रीय ऐतिहासिक ग्रन्थ में प्राप्त नहीं होता, किन्तु आदिकाल से विद्यमान ज्योतिष के विकास का कालवर्गीकरण नेमीचन्द्र शास्त्री की पुस्तक ''भारतीय ज्योतिष'' में प्राप्त होता है । ज्योतिषशास्त्र के विकास का काल वर्गीकरण इस प्रकार है ।

१) अन्धकारकाल ई. पूर्व १००००० पूर्व का समय ।

२) उदयकाल ई. पूर्व १०००१ से ई. पूर्व ५०० तक का समय ।

३) आदिकाल ई. पूर्व ५०१ से ई. ५०० तक का समय ।

४) पूर्वमध्यकाल ई. ५०१ से ई. १००० तक का समय ।

५) उत्तरमध्यकाल ई. १००१ से ई. १६०० तक का समय ।

६) आधुनिक काल ई. १६०१ से ई. १९५१ तक का समय ।

(अन्धकार काल ई. पूर्व १०००० पूर्व का समय)

यह स्पष्ट है कि मानव सृष्टि के समान ही ज्योतिष भी अनादि है । सृष्टि के आरम्भ में जब मनुष्य के पास अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति देने के लिये कोई लिपि या भाषा नहीं थी, तब वह केवल नाद से ही अपनी संवेदनाओं की अभिव्यक्ति करता था, लेकिन विकासवाद के सिद्धान्त के अनुसार यह नाद और अभिव्यक्ति के हाव-भाव भाषा में बदलने लगे, लेकिन उस समय तक भी लिपि का आविष्कार नहीं हुआ था । सम्पूर्ण कार्य मौखिक रूप से ही सञ्चालित होते थे । वेद को श्रुत भी इसलिये कहा जाता है कि उस समय के सारे ज्ञान और कार्य का आधार कण्ठस्थीकरण ही था । मनुष्य में प्रकृति प्रदत्त क्यों ? और कैसे?

ये दो जिज्ञासाएँ ही उसके सम्पूर्ण विकास का आधार हैं । इनके अभाव में ज्ञान की किसी भी शाखा का मनुष्य द्वारा विकास और आत्मसात करना असम्भव है । भारतीय संस्कृति की मूल विशेषता उसका आध्यात्मिक ज्ञान है । इसका सम्पादन ध्यान और योग क्रिया से होता है । इसी के माध्यम से मनुष्य ने यह जाना कि '**यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे**' अर्थात् जो कुछ इस शरीर में है वही ब्रह्माण्ड में है । जिन व्यक्तियों ने इस विषय में शोध किया वे ऋषि-मुनि कहलाये । मनुष्य ने जब आकाश को देखा तो उसके रहस्य के जानने का प्रयास भी किया था । अन्धकार काल की ज्योतिष विषयक मान्यताओं का ज्ञान उदय काल और आदि काल के साहित्य से हो जाता है । वैदिक दर्शन में सृष्टि का सृजन और विनाश माना जाता है । इसके अनुसार सृष्टि के निर्माण के साथ ही मनुष्य ग्रह-नक्षत्रों का अध्ययन आरम्भ कर देता है और शनैः शनै विकास के फलस्वरूप इस ज्ञान की अभिव्यक्ति की शक्ति भी आ जाती है। शास्त्रों की स्पष्ट मान्यता है कि एक समय में समस्त सृष्टि अन्धकार से आच्छादित थी । उस समय तर्क और ज्ञान भी प्रगाढ निद्रा से अभिभूत थे । इसके पश्चात् स्वयम्भू अव्यक्त परमात्मा ने सृष्टि की कामना से जल की सृष्टि की और उसमें अपना तेज स्थापित कर स्वर्ण सदृश तेजोमय एक अण्डा निकाला और इस अण्डे को दो भागों में विभाजित किया, जो द्युलोक व भूलोक कहे गये । इन्ही दो लोकों के मध्यवर्ती स्थान को आकाश कहते हैं। इसी विश्वस्त्रष्टा भगवान् से सूर्य व चन्द्ररूपी ब्रह्मा उत्पन्न हुए ।

(उदयकाल ई. पूर्व १०००१ से ई. पूर्व ५०० तक का समय)

उदयकाल में आर्यो ने वैदिकसाहित्य को जन्म दिया । यद्यपि वेद, आरण्यक, ब्राह्मण, उपनिषद् आदि धार्मिक रचनाएँ मानी जाती हैं, किन्तु इनमें ज्योतिष, आयुर्वेद, शिल्प की चर्चा पर्याप्त रूप से विद्यमान है। इस काल के साहित्य में मास, ऋतु, अयन, वर्ष, युग, ग्रहण, ग्रह कक्षा, नक्षत्र, दिन रात का मान और उसकी हानि-वृद्धि आदि विषयों पर ज्योतिषीय दृष्टि से विचार होने लगा था। वेदों की अपेक्षा शतपथ ब्राह्मण, बृहदारण्यक, तैत्तिरीय ब्राह्मण, ऐतरेय ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में ज्योतिष की चर्चा विकसित रूप में है । इस काल में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि सात ग्रहों का विवेचन मिलता है । ऋग्वेद में वर्ष के बारह चान्द्र मास और अधिक मास का उल्लेख मिलता है ।

तैत्तिरीय संहिता में बारह महिनों के नाम मधु, माधव, शुक्र, शुचि, नभस, नभस्य, इष, ऊर्जा, सहस, सहस्य, तपस और तपस्य प्राप्त होते है। अधिमास को संसर्प और क्षय मास को अहस्पति कहा गया है।

तैत्तरीय ब्राह्मण में ऋतुओं का उल्लेख करते हुए बताया है कि -

तस्य ते वसन्तः शिरः । ग्रीष्मोदक्षिणः पक्षः ।

वर्षः पुच्छम् । शरदुत्तरः पक्षः । हेमन्तो मध्यम ।

अर्थात् वर्ष का सिर वसन्त दक्षिण पंख ग्रीष्म वाम पङ्ख शरद पूँछ वर्षा और हेमन्त मध्यभाग है।

इसी प्रकार प्राचीन वैदिक और ब्राह्मण साहित्य में नक्षत्रों का भी उल्लेख मिलता है ।

(आदिकाल ई. पूर्व ५०१ से ई. ५०० तक का समय)

इस काल में ज्योतिष विषय पर स्वतन्त्र ग्रन्थ रचना की जाने लगी थी । इस युग में शिक्षा,कल्प व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छन्द ये छः भेद वेदाङ्ग के प्रकट हो गये थे । आदिकाल में उदयकाल में विशृङ्खलित रूप से प्रचलित ज्योतिष मान्यताओं के सङ्कलन का कार्य वेदाङ्गज्योतिष के रूप में आरम्भ हो गया था । वेदाङ्गज्योतिष के रचनाकाल के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं । प्रो. मेक्समूलर ने इसका रचनाकाल ई.पू. ३००, प्रो. बेवर ने ई.पू. ५००, कोलब्रुक ने ई.पू. १४१० और प्रो. ह्विटनी ने ई.पू. १३३८ बताया है। गणित क्रिया करने पर वेदाङ्गज्योतिष में प्रतिपादित अयन ई.पू. १४०८ में आता है । इस काल में ज्योतिष के प्रवर्तक १८ आचार्य हुए हैं जिन्होंने अपने दिव्य ज्ञान से इस शास्त्र का निर्माण किया ।

सूर्यः पितामहो व्यासो वसिष्ठोऽत्रिः पाराशरः ।
कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मनुरङ्गिराः ।।
लोमशः पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो भृगुः ।
शौनकोऽष्टादशाश्चैते ज्योतिःशास्त्र प्रवर्तकाः ।।

अर्थात् सूर्य, पितामह, व्यास, वशिष्ठ, अत्रि, पाराशर, काश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि, मनु, अङ्गिरा, लोमश पौलिश च्यवन,यवन और शौनक ये १८ ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक बताए गए हैं। ज्योतिषकरण्डक, सूर्य प्रज्ञप्ति, चन्द्र प्रज्ञप्ति आदि ग्रन्थ इसी काल के हैं। याज्ञवल्क्यस्मृति में नौ ग्रहों का स्पष्ट वर्णन है। यथा–

सूर्यः सोमो महीपुत्रः सोमपुत्रो बृहस्पतिः ।
शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चेति ग्रहाः स्मृताः ।।

उक्त श्लोक से सात वारों और नौ ग्रहों का अनुमान सहज ही हो जाता है । वशिष्ठ संहिता, रोमक सिद्धान्त, पौलिश सिद्धान्त, बृहत्पाराशरहोराशास्त्र आदि इस काल की रचनाएँ हैं ।

(पूर्वमध्यकाल ई. ५०१ से ई. १००० हजार तक का समय)

इस काल में ज्योतिष के स्कन्धत्रय (सिद्धान्त, संहिता, होरा) प्रस्फुटित हो गये थे । यह काल ज्योतिष का स्वर्णकाल कहा जा सकता है । इस काल में अनेक प्रकाण्ड विद्वानों ने जन्म लिया जिन्होंने अपने दिव्य ज्ञान से ज्योतिषज्ञान के सिद्धान्त और फलित को क्रमबद्ध किया । इनमें से कुछ का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

वराहमिहिर – इनका जन्म ४८५ ई. में माना जाता है । इन्होंने बृहत्संहिता, बृहत्जातक, लघुजातक, विवाह पटल आदि ग्रन्थों की रचना की ।

कल्याण वर्मा – इनका समय ई. सन् ५७८ माना जाता है । इन्होंने यवनों के होराशास्त्र का सार ग्रहण कर सारावली नामक फलित ग्रन्थ की रचना की ।

ब्रह्मगुप्त – इनका जन्म शक ५२० में हुआ इन्होंने ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त की रचना की ।

महावीराचार्य – ये जैन धर्मावलम्बी थे और गणित के उद्भट विद्वान् थे । इसका समय ई. सन् ८५० माना जाता है । गणितसार इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ है । इनके अतिरिक्त मुञ्जाल, श्रीपति, श्रीधर, भट्टोत्पल आदि महान् ज्योतिर्विद हुए । जिन्होंने अपने ज्ञान से ज्योतिषशास्त्र को समृद्ध किया।

(उत्तरमध्यकाल ई. १००१ से ई. १६०० तक का समय)

इस युग में ज्योतिषशास्त्र के साहित्य का बहुत विकास हुआ । इस काल के ग्रन्थ और ग्रन्थकारों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है ।

भास्कराचार्य – इनका जन्म सन् १११४ का माना जाता है । इन्होंने लीलावतीबीजगणित, सिद्धान्तशिरोमणी, करणकुतूहल और सर्वतोभद्र आदि ग्रन्थों की रचना की ।

दुर्गदेव – इनका समय सन् १०३२ माना जाता है । ये ज्योतिष के मर्मज्ञ विद्वान् थे । इन्होंने अर्धकाण्ड और रिट्ठसमुच्चय नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं ।

मल्लिषेण– इनका समय १०४३ माना गया है । इनका आयसद्भाव नामक ग्रन्थ प्राप्त होता है।

मकरन्द – इनका जन्म शक १३६० में माना जाता है । ये सिद्धान्त ज्योतिष के विद्वान् थे । पञ्चाङ्ग निर्माण में इनकी मकरन्द सारणी प्रसिद्ध है ।

केशव– इनका समय शक १३७८ माना गया है । इन्होंने जातकपद्धति, ताजिकपद्धति, मुहूर्ततत्त्व, वर्षग्रहसिद्धि , कुण्डाष्टकलक्षण, गणितदीपिका, ग्रहकौतुक आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की ।

महेन्द्र सूरी – इनका जन्म शक २२४२ में हुआ था । इन्होंने यन्त्रराज नामक ग्रहगणित के ग्रन्थ की रचना की ।

ढुण्डीराज – इनका समय शक १४६३ है । इन्होंने जातकाभरणम् नामक फलित ग्रन्थ की रचना की।

इनके अतिरिक्त नीलकण्ठ, रामदैवज्ञ, मल्लारी आदि अनेक विद्वानों ने अपनी रचनाओं और ज्ञान से ज्योतिषशास्त्र को उपकृत किया ।

(आधुनिककाल ई. १६०१ से ई. सन् १९५१ तक का समय)

इस काल में भारतीय ज्ञान विज्ञान की सम्पत्ति को मुस्लिम शासकों ने नष्ट किया । शकुन, प्रश्न, मुहूर्त, जन्म – पत्र के साहित्य की इस काल में अवश्य वृद्धि हुई । इस काल में अनेक प्रसिद्ध विद्वान् हुए जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

मुनीश्वर – इनका समय शक १५२५ माना जाता है । इन्होंने सिद्धान्त सार्वभौम नामक ग्रन्थ की रचना की ये काव्य, ज्योतिष, व्याकरण के विद्वान् थे ।

महीमोदय – ये लब्धिविजय सूरि के शिष्य थे । इनका समय १७२२ ई. माना जाता है । इन्होंने ज्योतिषरत्नाकर, गणित साठ सौ, पञ्चाङ्गनयनविधि आदि ग्रन्थों की रचना की ।

मेघ विजयगणि – इनका समय वि.स.१७३७ के लगभग माना जाता है । इनकी प्रमुख रचनाएँ वर्ष प्रबोध, उदयदीपिका, रमलशास्त्र और हस्तसञ्जीवन है ।

वाघजीमुनि – इनका समय वि.स. १७८३ माना जाता है । इन्होंने तिथिसारणी नामक ग्रन्थ की रचना की है ।

बापूदेव शास्त्री – इनका जन्म १८२१ में पूना में हुआ था । इन्होंने त्रिकोणमिति, बीजगणित और अव्यक्त गणित नामक ग्रन्थों की रचना की ।

सामन्तचन्द्रशेखर – इसका जन्म १८३५ हुआ ये अद्‌भुत विद्वान् थे । इन्होंने सिद्धान्तदपर्ण नामक ग्रन्थ की रचना की ।

निलाम्बर शर्मा – इनका जन्म शक १७४५ में हुआ । इन्होंने गोलप्रकाश ग्रन्थ लिखा है ।

इनके अतिरिक्त सुधाकर द्विवेदी, शिवलाल पाठक, पण्डित सूर्य नारायण व्यास, आचार्य महामहोपाध्याय सदाशिव शास्त्री मुसलगाँवकर, शिवदैवज्ञ, लज्जाशंकर शर्मा, लक्ष्मीपति आदि अनेक प्रसिद्ध ज्योतिर्विद हैं, जिन्होंने अपने परिश्रम और ज्ञान से ज्योतिष का प्रचार–प्रसार किया ।

नेमीचन्द्र शास्त्री ने १९५१ तक के काल का ही उल्लेख किया है, लेकिन ज्योतिष ज्ञान की धारा वर्तमान में आचार्य केदारदत्त जोशी,आचार्य रामचन्द्र पाण्डेय,आचार्य कामेश्वर उपाध्याय, आचार्य शिवेश्वर उपाध्याय जैसे विद्वानों के माध्यम से प्रवाहित हो रही है ।